Aayushi International Interdisciplinary Research Journal (AIIRJ)
UGC Approved Sr.No.64259
Vol - V Issue-IV APRIL 2018 ISSN 2349-638x Impact Factor 4.574

लोक चेतना के कवि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

आशीष कुमार गुप्ता
सहायक शिक्षक
शा.उ.मा.वि. भंवरमाल जिला — बलरामपुर

तीसरे सप्तक के कवि एवं समकालीन कविता के महत्वपूर्ण कवि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना हिन्दी साहित्य जगत के एक ऐसे हस्ताक्षर के रूप में प्रतिष्ठित हुए जिनकी लेखनी ने गद्य और पद्य दोनों विधाओं में अपना प्रभाव जमाया। उनकी कविता यात्रा पत्रकारिता से प्रारंभ होकर उस बिन्दु पर विराम लेती है जहाँ कविता के सृजन के रस प्राप्त हो जाते हैं। तीसरा सप्तक में अपने परिचय के सम्बन्ध में वे कहते हैं—''आकांक्षा कुछ ऐसा करने की जिससे यह दुनिया बदल सके, पूँजी मन का असन्तोष और मित्रों का सहयोग। दुनिया को बदलने के लिए मन का असन्तोष और मित्रों का सहयोग आवश्यक है, लेकिन उतने विराट कार्य के लिए यह पूँजी अपर्याप्त है, यह कहने की जरूरत न होनी चाहिए। लेकिन इसके बावजूद दुनिया को बदलने की आकांक्षा हमें सर्वेश्वर की एक मुख्य काव्य—प्रवृत्ति की सूचना देती है। यही उनकी कविताओं में मिलने वाले लोकजीवन के चित्रण की मूल प्रेरक है।''[१]

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का बचपन बस्ती (बाँसगाँव) जिला गोरखपुर में बीता था। इसीलिए उनका पूरा व्यक्तित्व ग्रामीण और कस्बाई था। उनके ग्रामीण व्यक्तित्व की झलक उनकी कविताओं में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। उनके सभी काव्य संग्रहों में लोक संपृक्ति का प्रसंग समावेशित है। उनके ग्रामीण व्यक्तित्व को रेखांकित करते हुए राजेन्द्र प्रसाद तिवारी कहते हैं कि— ''जीवन और लेखन का एक लम्बा संघर्षशील अध्याय इलाहाबाद और दिल्ली के महानगरीय कोलाहल में बीतने के बाद भी जमीन से रिश्ता उनके भीतर समाप्त नहीं हुआ। इसलिए उनकी कविताओं में पूर्वी उत्तर प्रदेश की गरीबी का बेबाक चित्र बार—बार झलक उठता है''[२] कुआनों नदी की कविताएँ इसका प्रमाण है। जिसमें कवि कहते हैं—

''अभी भी उस लग्गी को चुभन
मैं अपनी पसलियों पर महसूस करता हूँ
और एक सूखे चीमड़ कंकाल का
रूखा झुर्रियों वाला हाथ
मेरे गालों से छू जाता है। ....
लेकिन तट के कीचड़ मे नाव
धीरे—धीरे जाकर फँस जाती है।
फिर एक बदबू सी उठती है
और वह नमक और तेल लगी अपनी
रोटी चुपचाप खाने लगता है।''[३]

सर्वेश्वर की कविताओं का एक बड़ा भाग लोकजीवन और लोक राग से संपृक्त हैं। इसका प्रमुख कारण उनका बस्ती में बीता बचपन और अनाथालय के पास स्थित उनका छोटा मकान। उनके बचपन के हृदय से लगा अनाथालय व वहाँ निवासरत बच्चों के चेहरे की मुस्कान, जिसने सर्वेश्वर को प्रेरित व यथार्थ की भूमि पर बने रहने की प्रेरणा दी। उनकी कविताओं में गहरी लोक संपृक्ति इस कविता में देखी जा सकती है—

''मेघ आये बड़े बन–ठन के सँवर के
पाहुन ज्यों आए हों गाँव में शहर के
पेंड़ झुक झाँकने लगे गरदन अचकाए
आँधी चली, धूल भागी, घाघरा उठाए
बाँकी चितवन उठा नदी ठिठकी, घूँघट सरके
मेघ आए बड़े बन–ठन के सँवर के''[४]

इस कविता में बन–ठन, पाहुन, अचकाए, ठिठकी, जुहार लोक भाषा के शब्द हैं जो ग्रामीण संस्कृति तथा लोक राग से युक्त हैं। यह कविता लोकजीवन का विश्वसनीय दृश्य प्रकट करती है। इसे प्रमुख समकालीन आलोचक नन्द किशोर नवल ने भी सराहा है। सराहने के साथ–साथ उन्होंने यह भी कहा है कि–''सर्वेश्वर ने अनेक स्थानों पर ग्राम्य संवेदना और संस्कृति में लिपटे परिवेश का वर्णन किया है। गाँव का चित्रण करते समय ये स्वभावत: अपना सम्बन्ध देश, समाज और साहित्य की विकासोन्मुख धारा से जोड़ते हैं। क्योंकि ग्रामीण परिवेश की कविताओं में जो नयी प्रभावोत्पादकता है उसका यही कारण है।''[५]

कुआनो नदी की कविताएँ एक इतिहास की तरह भारतीय समाज की और भारतीय गाँवों की वृतांत बताती हैं। पानी की कल–कल, कल–कल आवाज और कवि का अंधेरे में लालटेन लेकर बाहर दौड़ना, मछलियाँ, जोंक, पनियल साँप के अलग–अलग ढंग, मेढकों की छपाक, बादल का झमाझम बरसना और बरसने से पहले घिघियाना ये सारे प्रसंग कवि की परिवेशगत् सजगता और उसका लोक से गहरा जुड़ाव को दर्शाता है।

अस्तित्ववाद के समानान्तर लोकवाद की धारा बहाने वाले सर्वेश्वर ग्रामीण जीवन के मानवीय और प्राकृतिक परिवेश का बखूबी चित्रण करते हैं जो लोकगीतों के रूप में वर्तमान समय में भी ताजगी देने में समर्थ हैं।

यथा –''यह डूबी–डूबी साँझ
उदासी का आलम
मैं बहुत अनमानी
चले नहीं जाना बालम।''[६]

सर्वेश्वर का यह लयात्मक लोकगीत 'सुहागिन का गीत' शीर्षक से नई कविता के जमाने में बहुत लोकप्रिय हुआ था। कवि तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों से भी काफी हलाकान रहे, उनकी कविताओं में खुद की, जन–जन की पीड़ा, उदासी, विवशता और अकेलापन का दृश्य भी देखने को मिलता है । वे अपनी खुद की पीड़ा को इस तरह व्यक्त करते हैं जिसमें जन–जन की पीड़ा साफ झलकती है–

यथा– '' मैं जानता हूँ मेरे दोस्त
कि हमारे–तुम्हारे
और सबके आँसू
इस धरती पर गिरेंगे
और सूखते चले जायेंगे।''[७]

'कुआनों नदी' शीर्षक कविता में कवि ग्राम और महानगर के परिवेश गत भिन्नता से उपजे द्वन्द को उजागर करने का प्रयास किया है। उसे दिल्ली की सड़कें कुआनों नदी जैसी दिखायी देती हैं। कवि को लगता है कि महानगर गाँवों का शोषण कर रहे हैं। आगे चलकर कुआनों नदी एक साधारण नदी न रहकर विशद भाव–संकेत, प्रतीकों के माध्यम से अपनी व्यापकता सिद्ध करती है–

''पानी कभी खतरे का निशान पार नहीं कर पाया
हर बाद पछाड़ खा—खाकर शान्त हो गया है,
एकाध पुश्ते टुटे हैं
एकाध गाँव डूबे हैं
नक्सलबाड़ी, श्रीकाकुलम, मुसहरी,
पानी कछार में फैल
सूखी धरती और सूखे दिलों में जज्ब हो गया है।''[८]

सर्वेश्वर की मूल चेतना पर चिंतन करें तो ज्ञात होता है कि उनकी कविताओं का बड़ा हिस्सा लोक—जीवन से जुड़ा है। उनके सभी काव्य संग्रह में कुछ कविताएँ ऐसी अवश्य मिल जायेंगी जो कवि की ग्राम्य संवेदना को पूरी सजगता, सूक्ष्मता व आत्मीयता के साथ व्यक्त करती दिखायी देती हैं। 'आँधी पानी आया' शीर्षक कविता कवि की लोक धरातल से उपजी कविता है जो संवेदनात्मकता से परिपूर्ण है साथ ही लोक शब्दों के प्रयोग से कविता और अधिक सशक्त जान पड़ती है—

''आँधी पानी आया
चिड़ियों ने ढोल बजाया
काली टोपी लगा दिशायें
बजा रही शहनाई
अमरिया की पहन घघँरिया
नाच रही पुरवाई
तरु—तरु ने शंख बजाया
धरती ने मंगल गाया''[०९]

'चरवाहों का युगल गान' शीर्षक कविता में पूरुष और नारी स्वरों के वार्तालाप के द्वारा ग्राम्य—परिवेश की प्रेम—प्रसंगयुक्त जिन्दगी का मिठास भरा चित्र है। प्रस्तुत कविता में शब्द—शब्द में पुरूष का आग्रह और नारी का प्रेममिश्रित इनकार भरा पड़ा है। इस आग्रह और इनकार में जीवन का रस है। एक ओर जहाँ नारी आकांक्षाओं का प्यार भरा स्वर है तो दूसरी ओर पुरुष का सामीप्य लाभ पाने के लिए रूठी नारी को मनाने का ढंग भी दृष्टिगोचर होता है—

पुरुष स्वर —''नदिया किनारे, हरी हरी घास/जाओ मत, जाओ मत/यहाँ आओ पास/ वया घोंसला, मोर घरौंदा, बैठो चित्र उरे हो''/
नारी स्वर—''नदिया किनारे/सोने की खान/छुओ मत, छुओ मत/ बड़ी बुरी बान/बिछिया झूमर मुँदरी तरकी/ लाओ कहाँ धरे हो।''[१०]

सर्वेश्वर की कविताओं में गाँव अपने संपूर्ण परिवेश और पूरी जीवन्तता के साथ उभरता है। वे ग्राम जीवन का वर्णन मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि इसके विपरीत वे ग्राम—जीवन के अभावों का, उसकी उपेक्षा का, उसकी तकलीफ का वर्णन करते हैं। काठ की घंटियाँ से लेकर कुआनों नदी तक सर्वेश्वर की कविता में ग्राम्य जीवन के प्रति गहरी संवेदना है। लोक जीवन के विविध प्रसंग उनकी कविताओं में दिखायी देते हैं। सुहागिन का गीत, गाँव की शाम का सफर, नये साल पर, कुआनो नदी, भुजैनियाँ का पोखरा, बाँसगाँव आदि कविताओं में लोकभाषा के शब्द भी बहुलता में हैं। और लोक संस्कृति की सुगंध भी है। ग्रामीण मुहावरे और कहावतों का भी प्रयोग कर इन्होंने कविता को सशक्त व सरस बनाया है। लोकगीतों की तर्ज पर लिखी एक कविता अत्यन्त ही सरल है जिसमें वे एक ग्रामीण व्यक्ति के गरीबी का गीत गा रहे हैं। इस संदर्भ में निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य है—

''खबर लड़ाई की हमको न भाये
दिल घबराये भैया दिल घबराये।
सायरन चीख पड़ा कल आधी रात को
मुन्ना मेरा मचल गया नोन—तेल—भात को।
रोटी कहाँ ताड़ी का लगाओ दो घूँटा
बीबी तोड़ाय के भाग गयी खूँटा।''[११]

यह कविता कुआनों नदी संग्रह की कविता 'गरीबा का गीत' से उद्धृत है जिसमें कवि तत्कालीन अभावग्रस्त जिन्दगी और तकलीफ का वर्णन करते हैं। इसी संदर्भ में एक और कविता है जिसमें कवि यह बताना चाहते हैं कि कुछ व्यक्ति सिर्फ डिंग हाँकते है, सामर्थ्य न होने पर भी अपने को समर्थ, बलवान समझने की कोशिश करते हैं भले घर में भूजी भाँग नसीब न हो—

''दुइ पैसे का रंग डाल के झाड़े रौ महँगुआ
तन पर एक न बित्ता कपड़ा
फटी लँगोटी लाँग नहीं,
सदा रहे भँडुआ होली के
आज दिना का स्वाँग नहीं,
दोऊ हाथ कीचड़ उछाल के झाड़े रौ महँगुआ।
दुई पैसे का रंग डाल के झाड़े रौ महँगुआ।''[१२]

खूँटियों पर टँगे लोग संग्रह की एक कविता हैं 'पिछड़ा आदमी' जिसका अर्थ शीर्षक से ही स्पष्ट है। इसमें कवि तत्कालीन समय की राजनीतिक व्यवस्था पर तगड़ा प्रहार किया है वे कहते हैं कि इस देश की भ्रष्ट शासन व्यवस्था में पिछड़ा आदमी सभी कार्यों में पीछे रह जाता है चाहे वह बोलने का काम हो, चलने का काम हो या खाने का काम हो। और जान गंवाने में सबसे पहले वही पिछड़ा आदमी आगे आता है—

जब सब बोलते थे/वह चुप रहता था,
जब सब चलते थे/वह पीछे हो जाता था,
जब सब खाने पर टूटते थे/ वह अलग बैठा टूँगता रहता था,
जब सब निढाल हो सोते थे/ वह शून्य में टकटकी लगाये रहता था,
लेकिन जब गोली चली/ तब सबसे पहले/ वही मारा गया।''[१३]

कवि की यह कविता पिछड़ा आदमी' शीर्षक से उद्धृत है लेकिन इसमें लोक का आदमी छिपा हुआ है। यह वर्तमान समय के लिए भी अत्यन्त प्रासंगिक है क्योंकि कवि के तत्कालीन समय की और वर्तमान समय की अगर तुलना करें तो इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि देश में जितने भी विकास के कार्य हो रहे हैं उसमें पिछड़ा आदमी, लोक का आदमी ही सिर्फ अपना कर्तव्य ईमानदारी पूर्वक कर रहा है, नेताओं के झूठे वायदे भी सुन रहा है, अपनी उन्नति के सपने भी देख रहा है परंतु जब देश में किसी तरह की भयावह स्थिति आती है जैसे कि नक्सलियों से लड़ना, देश की सीमा पर तैनात रहना, भगदड़ में शामिल होना, इन सभी जगहों पर सिर्फ पिछड़ा आदमी ही शिकार होता है, अफसर, नेता तो आसमान से उड़ कर आते हैं और उसी रास्ते से वापस चले जाते हैं। इस तरह हम देखते है कि सर्वेश्वर की कविताओं का विस्तृत फलक ग्राम्य संवेदना और लोकजीवन की अभिव्यक्ति कराता है। डॉ. हरिचरण शर्मा के शब्दों में ''ग्राम्य संवेदना की वाणी देने वाली अनेकानेक अनुभूतियाँ सर्वेश्वर के काव्य में भी उपलब्ध है। उनकी मूल चेतना का एक बड़ा हिस्सा लोकजीवन से जुड़ा हुआ है। किसी भी संग्रह को उठाकर देख लीजिए, उसमें कुछ कविताएँ ऐसी अवश्य मिल जायेंगी जो कवि की ग्राम्य—संवेदना को पूरी

सूक्ष्मता और आत्मीयता से व्यक्त करती होंगी। काठ की घंटियाँ से लेकर जंगल का दर्द तक की काव्य यात्रा इसका प्रमाण है। उल्लेख्य तथ्य यह है कि इस तरह की कविताओं में जहाँ एक ओर हमारी ग्राम्य संस्कृति हमारा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य अभिव्यक्त हुआ है। वहाँ दूसरी ओर अभिव्यक्ति को सहज और विश्वसनीय बनाये रखने के लिए लोकधुनों और लोकभाषा को ही अपनाया गया है। जो लोग लोक संस्कृति से परिचित हैं और जो उससे (सांस्कृतिक धरोहर से) परिचित होना चाहते हैं, उनके लिए सर्वेश्वर काव्य में बिखरी हुई ये कविताएँ एक अनिवार्य सांस्कृतिक कोश का काम कर सकती है।''[१४]

वस्तुत: हम कह सकते हैं कि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की कविताएँ लोकजीवन और लोक संवेदना से परिपूर्ण हैं। इनकी कविता तथा इनका लोकजीवन एक दूसरे के पूरक प्रतीत होते हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कवियों के द्वारा ही हमें तत्कालीन लोक संस्कृति की अनुभूति हो सकती है।

संदर्भ—

१. नवल, नन्दकिशोर— समकालीन काव्य यात्रा, राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण — २०१४, पृ. ६५
२. कृष्ण, कुमार— समकालीन कविता का बीजगणित, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण — २००४, पृ.३३—३४
३. सक्सेना, सर्वेश्वर दयाल—कुआनो नदी, राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण—१९७३, पृ. २२—२३
४. कृष्ण, कुमार— समकालीन कविता का बीजगणित, पृ.३४
५. कृष्ण, कुमार— समकालीन कविता का बीजगणित, पृ.३४
६. अज्ञेय (सम्पादक) — तीसरा सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, आठवाँ संस्करण— २००३, पृ. २१७—१८
७. तिवारी, विश्वनाथ प्रसाद—समकालीन हिन्दी कविता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद—१,प्रथम संस्करण—२०१०, पृ.१५४
८. सक्सेना, सर्वेश्वर दयाल—कुआनो नदी, पृ. २२—२३
९. शर्मा, डॉ. हरिचरण —सर्वेश्वर का काव्य, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण —१९८० पृ. १३५
१०. शर्मा, डॉ. हरिचरण —सर्वेश्वर का काव्य, पृ. १३५
११. सक्सेना, सर्वेश्वर दयाल—कुआनो नदी, पृ.९४—९५
१२. सक्सेना, सर्वेश्वर दयाल—कुआनो नदी, पृ.९२
१३. सक्सेना, सर्वेश्वर दयाल—खूँटियों पर टंगे लोग, राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण १९८२,पृ. ३६
१४. शर्मा, डॉ. हरिचरण —सर्वेश्वर का काव्य, पृ.१३४